शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

पातन्जल योगदर्शन में ईश्वर का स्वरूप : एक विवेचन

संदीप ठाकरे (योग विभाग)
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय
अमरकंटक, मध्यप्रदेश, भारत

शोध संक्षेप

योगदर्शन के प्रणेता महर्षि पतंजलि माने जाते हैं। इन्हीं के नाम पर इस दर्शन को पातन्जल योग दर्शन भी कहा जाता है। योग के मतानुसार मोक्ष की प्राप्ति ही जीवन का चरम लक्ष्य है। इस दर्शन में मोक्ष की प्राप्ति के लिए विवेक ज्ञान को ही पर्याप्त नहीं माना गया हैं, बल्कि योगाभ्यास पर भी बल दिया गया है। योगाभ्यास पर बल देना इस दर्शन की निजी विशिष्टता है। इस प्रकार योगदर्शन में व्यावहारिक पक्ष अत्यधिक प्रधान है। प्रस्तुत शोध पत्र में योग दर्शन में ईश्वर के स्वरूप पर विचार किया गया है।

भूमिका

'योगदर्शन, सांख्यदर्शन की तरह द्वैतवादी सांख्य के तत्वशास्त्र को पूर्णतः मानता है। इसमें यह केवल 'ईश्वर' को जोड देता है।' 1 सांख्य की तरह योग भी संसार को तीन प्रकार के दुःखों से परिपूर्ण मानता है। ये तीन प्रकार के दुःख- आध्यात्मिक दुःख, अधिभौतिक दुःख और अधिदैविक दुःख हैं। 2 मोक्ष का अर्थ इन तीन प्रकार के दुःखों से छुटकारा पाना है। बन्धन का कारण अविवेक है। इसलिए मोक्ष को प्राप्त करने हेतु तत्वज्ञान को आवश्यक माना गया हैं। वस्तुओं के वास्तविक स्वरूप को जानकर ही मानव मुक्त हो सकता है। सांख्य के मतानुसार मोक्ष की प्राप्ति विवेक ज्ञान से होती है, परन्तु योगदर्शन विवेक ज्ञान की प्राप्ति के लिए योगाभ्यास को आवश्यक मानता है। इस प्रकार योगदर्शन में सैद्धान्तिक ज्ञान के अतिरिक्त व्यावहारिक पक्ष पर भी जोर दिया है।

योगदर्शन में ईश्वर चिंतन

योगदर्शन, सांख्य के तत्व-विचार को स्वीकार करता है। सांख्य के अनुसार तत्वों की संख्या पच्चीस है। सांख्य के पच्चीस तत्वों प्रकृति, महत् या बुद्धि, अहंकार (सात्विक, राजसिक, तामसिक) सात्विक अहंकार से (पंच ज्ञानेन्द्रिया, पंच कर्मेन्द्रियाँ, मन) तथा तामसिक अहंकार से (पंच तन्मात्रा, पंच महाभूत) आदि चौबीस तत्व हैं और पच्चीसवां तत्व पुरुष कहलाता है। योगदर्शन भी इन तत्वों को स्वीकार कर तत्वों में एक तत्व ईश्वर जोड देता हैं जो योगदर्शन का छब्बीसवां तत्व है। अतः योगदर्शन के मतानुसार तत्वों की संख्या छब्बीस है। योगदर्शन में ईश्वर के स्वरूप की पूर्ण रूप से चर्चा हुई है। ईश्वर को प्रस्थापित करने के लिए तर्कों का भी प्रयोग किया गया है। ईश्वर को योगदर्शन में योग का विषय कहा गया है। योगदर्शन में ईश्वर के विषय में कहा है-

'क्लेशकर्मविपाकासयैपरामृष्टः पुरूषविशेष ईश्वरः'3

अर्थात् क्लेश, कर्म, विपाक और आशय इन चारों में जो सम्बन्धित नहीं है तथा जो समस्त पुरूषों में उत्तम है, वह ईश्वर है। जो दुःख देते हैं, वे क्लेश कहलाते हैं। वे अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश-संज्ञक पांच प्रकार के है।4 इन क्लेशों में धर्म-अधर्म अर्थात शुभ-अशुभ और

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

इनसे निमित्त ये तीन प्रकार के कर्म उत्पन्न होते है।5 वेदों में भी विधान किए हुए सब प्राणियों के कल्याण की भावना से किये हुए (सकाम) कर्म धर्म और वेदों में निषेध किए हुए हिंसात्मक कर्म, अधर्म हैं।6 कर्म के फल का नाम विपाक है अर्थात उन सकाम कर्मो के फल सुख, दुःख, रूप, जाति, आयु और योग विपाक कहलाते हैं।7 फल पकने तक जो चित्तभूमि में पडी हुई सोती है, वह वासना 'आशय' कहलाती है, अर्थात जो कर्म अभी तक पक कर जाति आयु और भोगरूप फल नहीं दे पाये हैं, उन कर्मफलों के वासनारूप तो संस्कार चित्तभूमि में पडे हुए हैं, वे आशय कहलाते हैं।8 उपर्युक्त क्लेश-कर्म आदि चारों से जो तीन काल में लेशमात्र भी सम्बन्ध नहीं हैं, वह अन्य पुरूषों से विशेष चेतन ईश्वर कहलाता है।

ईश्वर की विशेषता का पुनः प्रतिपादन करते हुए महर्षि पतंजलि योगसूत्र में स्पष्ट करते हैं -'तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्' 9 अर्थात उस ईश्वर में सर्वज्ञता का बीज कारण अर्थात ज्ञान निरतिशय है। जिससे बढ कर कोई दूसरी वस्तु हो, वह सातिशय है और जिससे बडा कोई न हो वह निरतिशय है। ईश्वर ज्ञान की अवधि है, उसका ज्ञान सबसे बढका है। उसके ज्ञान से बढकर किसी का ज्ञान नही है। इसलिए उसे निरतिशय कहा गया है। जिस प्रकार ईश्वर में ज्ञान की पराकाष्ठा है, उसी प्रकार धर्म, वैराग्य, यश, और ऐश्वर्य आदि की पराकाष्ठा भी उसी को समझना चाहिए।10 ईश्वर की विशेषता का प्रतिपादन करते हुए योगदर्शन में कहा है -'पूर्वेषामपि गुरूः कालेनानवच्छेदात्' 11 अर्थात वह ईश्वर सबके गुरू हैं क्योंकि उसका काल से अवच्छेद नहीं है। सर्ग आदि में उत्पन्न होने के कारण सबका गुरू ब्रह्म को माना गया है, परन्तु उसका काल से अवच्छेद है।12 ईश्वर स्वयं अनादि और अन्य सबका आदि है।13 वह काल की सीमा से सर्वथा अतीत हैं। इसलिए वह सम्पूर्ण पूर्वजों का भी गुरू अर्थात सबसे बडा, सबसे पुराना और सबको शिक्षा देने वाला है।14

इस प्रकार ईश्वर का निरूपण करके अब उसका प्रणिधान किस प्रकार करना चाहिए। इस विषय में योगदर्शन में कहा है-'तस्य वाचकः प्रवणः' 15 अर्थात उस ईश्वर का वाचक नाम ॐकार है। अतः योगमार्ग पर चलनेवालों को उचित है कि 'ओम्' नाम से ही ईश्वर की उपासना करें, क्योंकि यही मुख्य अनादि और नित्य नाम व्यापक अर्थ वाला है, अन्य सब गौण और संकीर्ण अर्थ वाले हैं। सारी श्रुतियां और स्मृतियाँ उसी 'ओम्' का मुख्य रूप से वर्णन करती हैं। यथा मुन्डकोपनिषद में ओम के विषय में कहा है -' प्रणव (ओम्) धनुष है। आत्मा बाण है। ब्रह्म लक्ष्य है। सावधानी से उसे बींधना चाहिए। बाण के सदृश (अभ्यासी अपने लक्ष्य ब्रह्म में) तन्मय हो जाय'।16 माण्डुक्यउपनिषद में ओम को निरूपित करते हुए कहा है - सब कुछ ओम अक्षर है, यह जो कुछ भूत, वर्तमान, और भविष्य है, सब उसकी व्याख्या है और जो कुछ तीनों कालों से ऊपर है, वह भी ओंकार ही है।17 श्रीमदभागवत गीता में भी ओम के विषय में कहा है जो पुरूष ओम ऐसे इस अक्षररूप ब्रह्म को उच्चारण करता हुआ उसके अर्थस्वरूप परमात्मा को चिन्तन करता हुआ शरीर को त्यागकर आता है, वह पुरूष परमगति को प्राप्त होता हैं। ओंकार को सारे मंत्रों का सेतु बतलाया गया है तथा मनोवांछित फल की प्राप्ति के लिए प्रत्येक मंत्र को ओम के साथ उच्चारण किया जाता हैं।18 इस प्रकार ईश्वर का नाम बतलाकर पतंजलि उसके प्रयोग की विधि स्पष्ट करते है -

शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जुलाई 2017
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

'तज्जपस्तदर्थभावनम्'19 अर्थात् उस ओंकार का जप और उसके अर्थस्वरूप परमेश्वर का चिन्तन करना चाहिए। चित्त को सब ओर से निवृत्त करके केवल ईश्वर में स्थित कर लेने का नाम भावना है। इस भवाना से अविद्या, क्लेश, कर्म फल और वासनाओं के संस्कार जो बन्धन अर्थात जन्म और मृत्यु के कारण हैं, चित्त से धुल जाते हैं और सात्विक शुद्ध ज्ञान के संस्कार उदय होते हैं और केवल ईश्वर ही एक ध्येय रह जाता है।20 इस प्रकार योगमार्ग में जो रूकावटें आती हैं उन्हें ईश्वर दूर करता है। जो ईश्वर की भक्ति करते हैं उन्हें ईश्वर सहायता प्रदान करता है।

निष्कर्ष

योगदर्शन में ईश्वर को सिद्ध करने के लिए निम्न तर्को का प्रयोग हुआ हैं -

1 वेद एक प्रमाणित ग्रन्थ है। वेद में जो कुछ भी कहा गया वह पूर्णतः सत्य है। वेद में ईश्वर वर्णन है। वेद के अतिरिक्त उपनिषद और अन्य शास्त्रों में भी ईश्वर के अतिरिक्त अस्तित्व को माना गया है। इससे प्रमाणित होता है कि ईश्वर की सत्ता है। इस प्रकार शब्द प्रमाण से ईश्वर का अस्तित्व प्रमाणित किया गया हैं।21

2 ईश्वर को प्रमाणित करने के लिए अविच्छिन्नता के नियम का सहारा लिया जाता है। जो नियम परिमाण के क्षेत्र में लागू होता है वहीं नियम ज्ञान के क्षेत्र में लागू होना चाहिए। ईश्वर के अन्दर ज्ञान की सबसे बडी मात्रा होनी चाहिए। इससे प्रमाणित होता है कि ईश्वर की सत्ता है।22

3 पुरूष और प्रकृति के संयोग से सृष्टि होती है। उनके वियोग से प्रलय होती है। पुरूष और प्रकृति एक दूसरे के भिन्न और विरूद्ध कोटि के तत्व हैं। अतः उनके संयोग और वियोग अपने आप नहीं हो सकता। इसके लिए एक असीम बुद्धि वाले व्यक्ति की आवश्यकता है। वही ईश्वर है।23

4 ईश्वर का अस्तित्व इसलिए भी आवश्यक है कि वह योगाभ्यास में सहायक है। ईश्वर प्राणिधान समाधि का साधन है। यों तो ध्यान या समाधि का विषय कुछ भी हो सकता है। किन्तु यदि उनका विषय ईश्वर है तो ध्यान के विचलित होने का भय नहीं रहता। ईश्वर की ओर एकाग्रता के फलस्वरूप योग का मार्ग सुगम हो जाता है। अतः ईश्वर का अस्तित्व आवश्यक है।24

संदर्भ ग्रन्थ

1 सिन्हा हरेन्द्रप्रसादः भारतीय दर्शन की रूपरेखा (2003), मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी, पृष्ठ 270
2 करम्बेलकर, विनायक वामनः सांख्य कारिका (2014), रामकृष्ण मठ धंतोली, नागपुर, पृष्ठ 14
3 योगदर्शन - 1/24
4 योगदर्शन - 2/3
5 योगदर्शन - 4/7
6 पतंजल योगदर्शन, गीताप्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ 198
7 योगदर्शन - 2/13
8 योगदर्शन - 4/8
9 योगदर्शन - 1/25
10 हरिकृष्णदास गोयनकाः पातन्जल योगदर्शन, गीता प्रेस गोंरखपुर, पृष्ठ 26
11 योगदर्शन - 1/26
12 गीता- 8/17
13 गीता- 10/(2-3)
14 श्वेताश्वतरोपनिषद-(3/4,6/18)
15 योगदर्शन - 1/27
16 मुण्डकोपनिषद-2/4
17 माण्डुक्यउपनिषद- 1
18 गीता- 8/13
19 योगदर्शन - 1/28
20 पातन्जल योगप्रदिप, गीताप्रेस, गोरखपुर पृष्ठ 209

21 सिन्हा हरेन्द्रप्रसाद: भारतीय दर्शन की रूपरेखा
(2003), मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी, पृष्ठ 277
22 सिन्हा हरेन्द्रप्रसाद: भारतीय दर्शन की रूपरेखा
(2003), मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी, पृष्ठ 277
23 सिन्हा हरेन्द्रप्रसाद: भारतीय दर्शन की रूपरेखा
(2003), मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी, पृष्ठ 277
24 सिन्हा हरेन्द्रप्रसाद: भारतीय दर्शन की रूपरेखा
(2003), मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी, पृष्ठ 277